International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030, Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 2; Issue 3; May 2017; Page No. 293-296

आधुनिक संस्कृत यात्रा-काव्यों में वैदेशिक संस्कृति : एक अध्ययन

मोहम्मद इरफान सिद्दीकी

शोधच्छात्र, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, दिल्ली, भारत।

प्रस्तावना

यात्रा काव्य का आविर्भाव कब हुआ इस दृष्टि से यदि विचार किया जाय तो भारतीय संस्कृत साहित्य में यात्रा काव्य की सर्वप्रथम झलक ऋग्वेद के 10वें मण्डल के 108 वे सूक्त में सरमा-पणि संवाद में ही दृष्टिगोचर होते है जब पणियों ने आर्यो की गायों को चुरा लिया था तब इन्द्र ने अपनी शुनी (सरमा) को गायों को खोजने के लिए और पणियों को समझाने के लिए दूती बनाकर भेजा था।[1] अतः यदि रामायण काल के समय देखा जाय तो वाल्मीकि रामायण में भी यात्रा काव्य स्पष्ट रूप से दिखायी देता है। वाल्मीकि रामायण के अरण्यकाण्ड में जब सीता का हरण विश्रवा मुनि के पुत्र और कुबेर के सगा भाई रावण के द्वारा कर लिया जाता है तब राम ने किष्किन्धाकाण्ड में अपने प्रिय मित्र सुग्रीव की सहायता से सीता की खोज में पवनपुत्र हनुमान को दूत बनाकर यात्रा करवाया था।[2]

किन्तु उस समय सुधीजनों द्वारा यात्रा-काव्य पर लेखनी नहीं चली। इधर प्रथम शताब्दी में भी महाकवि कालिदास ने मेघदूत में यक्षिणी के विरह में व्याकुल होकर मेघ से भी यात्रा करवायी थी लेकिन उस समय यात्रा-काव्य लिखने की कोई परम्परा विद्वानों के विवेक में स्फुटित नहीं हुई। अतः इससे स्पष्ट हो जाता है कि संस्कृत साहित्य में यात्रा काव्य का बीजारोपण वैदिक काल में ही हो चुका था किन्तु उन यात्राओं को काव्य के रूप में परिगणित नहीं किया गया।

तत्पश्चात् 20वीं शताब्दी में भारतीय विद्वानों द्वारा विदेश में जाकर, वहां के प्राकृतिक सौन्दर्य को देखकर, उनके मन में, नवीन चेतना विकसित हुई और यात्रा काव्यों पर अपने विचारों को लेखनी के माध्यम से सर्वप्रथम व्यक्त किया गया। इस प्रकार विद्वानों ने अपनी मेधा के बल पर व्यवहारिक और आजीविका दोनों पक्षों को लेकर गद्यों और कविताओं के माध्यम से यात्रा काव्य लिखे हैं।

समकालिक कविता ने एक ओर तो अपने कलापक्ष को संवारा है उसे नया रूप दिया है नयी विधाएँ उत्पन्न की हैं वहीं दूसरी ओर विषयों की नवीनता में एक नया अध्याय जुड़ गया है। आज कवि अपनी प्रत्येक यात्रा को स्मृति में संयोजकर उसे शब्दों के माध्यम से व्यक्त कर देना चाहता है। समाज के प्रबुद्ध वर्ग की प्रशंसा में रचनाएं भी लिख रहा है। परन्तु इस पक्ष का लेखन इतना प्रभावशाली एवं निष्पक्ष नहीं कहा जा सकता है। यह स्तुतिपरक साहित्य चारा युग की याद ताजा कर देता है। यद्यपि इसमें कुछ अंश तथ्यपरक भी होते हैं परन्तु प्रायः इसका उद्देश्य चाटुकारिता से परिपूर्ण होता है। इसके प्रतिफलित रूप में पुरस्कार प्राप्ति की अभिलाषा भी निहित होती है।

यात्राओं को तूलिका में पिरोकर शब्दचित्र खींचने में प्रायः अधिकांश कवियों ने संकोच नहीं किया है। सत्यव्रत शास्त्री की 'शर्मण्यदेशः सुतरां विभाति' एवं 'थाईदेशविलासम्', राजेन्द्र मिश्र कृत 'बालीप्रत्यभिज्ञानशतकम्', रमाकान्त शुक्ल कृत 'भातिमौरीशसम्', राधा वल्लभ त्रिपाठी द्वारा विरचित 'धरित्रीदर्शम्' प्रभाकरनारायण कवेठकर कृत 'भूलोकविलोकनम्' आदि रचनाएँ उल्लिखित की जा सकती हैं। इसके अतिरिक्त हर्षदेव माधव, बनमाली बिश्वाल, रवीन्द्रपण्डा, इच्छाराम द्विवेदी प्रो. हरिदत्त शर्मा, डॉ. वीरेन्द्र सिंह आदि अनेक कवियों ने प्रक्षिप्त कविताओं में अनेकों देशों एवं यात्राओं के प्रसंग एकत्र कर लिये हैं।

डॉ. प्रभाकरनारायणकवेठकर ने अपने सम्पूर्ण यात्रा वृतान्तों को ''भूलोकविलोकनं'' संस्कृत काव्य में संगृहीत किया है। विमान की यात्रा करते समय विमान परिचारिका से लेकर विमान के छोटे से छोटा दृश्य भी उनकी सूक्ष्म दृष्टि से बच नहीं सका है। तथा वह विमान बाला के हृदय तक पहुँचकर उसकी वेदना का अनुभव करते है।

इस कविता में यात्रा प्रसंग के साथ-साथ कवेठकरजी ने नारी विवशता का बहुत ही मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया है। साथ ही विमान के वातायन से झाँकते हुये पृथ्वी किस प्रकार से मन को मोह लेती है। इस पर भी सुन्दर वर्णन किया है।

अभिराज राजेन्द्र मिश्र जी ने- विमानयात्राशतकम्' में 103 श्लोकों के माध्यम से अपनी 'बालीद्वीप' यात्रा का अन्यन्त सुन्दर वर्णन प्रस्तुत किया है। दिल्ली के पालम हवाई अड्डे से प्रारम्भ हुई उनकी यात्रा विमान के हर कोने में पहुँचाकर पाठकों को हवाई यात्रा का पूर्ण आनन्द देती है। उसमें न केवल हवाईजहाज के उड़ने और उतरने के बीच की गतिविधियाँ हैं अपितु मानसिक प्रवृत्तियों, भावभंगिमाओं और मनोगत अनुभूतियों को शब्दों के द्वारा साकार रूप में प्रस्तुत किया है।

आचार्यभास्कर त्रिपाठी की हिमाचल यात्रा भी अत्यन्त चित्रोपम है इसमें हिमवीथी और देवदारू के वृक्ष कैसे चित्त को आकर्षित करते है इसका वर्णन बड़े सुन्दर ढंग से किया गया है।

---

1 ऋग्वेद 10 मण्डल सरमा पणिसंवाद, 108/2

2 वाल्मीकि रामायण, किष्किन्धाकाण्ड, 32वां सर्ग। 21-26

हर्षदेव माधव की 'भावस्थिराणि जनान्तरसौहृदानि' नामक पुस्तक में मसूरी से प्रारम्भ हुआ वर्णन हरिद्वार, कोलोरडोप्रदेश, चेन्नई, सोमनाथ, रूमानिया, शिलाँग, नागार्जुनकोण्डा, लद्दाख, कलकत्ता, मिस्रदेश, पशुपतिनाथ, बंगाल, सिंहलद्वीप से भ्रमण करते है हुए सम्पूर्ण स्थलों के चित्तों को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करने में पूर्ण समर्थ हुये है।

इन प्रसंगों में स्थलों का वर्णन प्रधानरूप से हुआ है। इनकी यात्रा के विषय में कवि ने उल्लेख नहीं किया है। परन्तु बनमाली बिश्वाल का 'यात्रा' काव्य संग्रह सरल भाषा शैली में यात्रा का रोचक वर्णन प्रस्तुत करता है। इसमें यात्रा के समय यत्र तत्र आने वाले प्रसंगों को उनके चिन्तनशील मस्तिष्क ने आकार प्रदान किया है। रेलवे स्टेशन पर चूहों की चहलकदमी प्रो. बिश्वाल जैसे सक्रिय कवि को ही लिखने को विवश कर सकती है।

जीवन की छलना उन्हें कभी भी छल सकती है। कभी भी वह रेल की पटरियों पर अन्तिम श्वाँस ले सकता है, वह घर के चूहों की भाँति निश्चिन्त एवं सुरक्षित नहीं है, लेकिन अपने कर्म में पटु रेलवे प्लेटफार्म पर निश्चिन्तता से जिये जा रहे है। यह है जीवन के फक्कड़पन का सबक।

प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी ने 'धरित्रीदर्शनलहरी' के पाँच उन्मेष में सम्पूर्ण पृथ्वी को समेट लिया है। वे केवल रेलयात्रा के प्रसंग में ही संतुष्ट नहीं हैं अपितु अर्न्राष्ट्रीय फलक का अनुभव करते हुये वायुयान की यात्रा का आस्वाद भी पाठकों को कराते हैं। जैसे ही आकाश में वायुयान उड़ता है उनका स्तब्ध मन त्रिशंकु बन जाता है।[3] उन्होंने अपने इस रचना में विमान से दर्शनीय पृथ्वी का बहुआयामी चित्र प्रस्तुत किया है। कभी तो उसकी नदियाँ, कभी सूर्योदय, कभी सायंकाल की लालिमा और कभी क्षितिज का स्पर्श करता हुआ पारावार भिन्न रूप में उनके नेत्रों के समक्ष नृत्य करता है। पूर्णिमा के प्रकाश में अनायास ही सघन अन्धकार की सज्जा, तो कहीं धवलित मेघमालाओं की चित्रावली सुसज्जित होकर 'त्रयम्बक' के अट्टाहास की अनुभूति करा देती है।[4] पृथिवी का सौन्दर्य आकाश में दृश्यमान होकर नवीन बोध प्रदान करता है-

डॉ. राधावल्लभ त्रिपाठी की यह रचना यात्रा वृतान्त के रूप में बहुत ही सशक्त कही जा सकती है उन्होंने विमान से पृथिवी के स्वरूप का यथावत एवं रोचक वर्णन प्रस्तुत किया है। केवल बाह्य स्वरूप का वर्णन ही हमें यहाँ दिखाई नहीं देता अपितु विमान के अन्दर विभिन्न देशों के नागरिकों एवं विमान परिचारिकाओं का व्यवहार, सह-यात्रियों का पारस्परिक वार्तालाप, यान में वितरित होने वाली भोज्य वस्तुएं, मदिरा, सभी सम्पूर्ण दृश्य कवि की दृष्टि से बच नहीं पाये हैं।[5] पाठक पढ़ते समय स्वय इस यात्रा में अनायास ही शामिल हो जाता है। वस्तुतः यात्रा विषयक काव्य अर्वाचीन संस्कृत साहित्य की एक सर्वाधिक लोकप्रिय काव्य योजना है जिसमें अधिकांशतः कवियों ने अपने अनुभूतिजन्य चित्रों को समाहित किए है। कवियों की राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय यात्राएँ, काव्ययात्रा बनकर अपने पाठकों को यत्र तत्र भ्रमण कराती रही हैं। उधर अमेरिका के बारे में डॉ. वीरेन्द्र सिंह ने अपनी कृति ''अमेरिका-अमेरिका'' यात्रा काव्य में अमेरिका की सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और सशक्ति सेना बल का व्यापक वर्णन किया है। उन्होंने बताया है कि संयुक्त राज्य अमेरिका एक ऐसा देश है जिसको पूरब में अटलांटिक महासागर छूता है और पश्चिम में प्रशांत महासागर। उनके बीच में यह 4500 किलो मीटर क्षेत्र में फैला हुआ है। उत्तर में कनाडा है और दक्षिण में मैक्सिको। तेज रफ्तार रेलगाड़ी यह दूरी अड़तालीस घंटे में पूरी करती है और जेट विमान पाँच घंटे में। अमेरिका में प्रवेश करते ही जो सबसे पहली बात ध्यान आकर्षित करती है वह है वहां की अतिशय तेज गति। पहली बार पहुंचने पर वहां पर एकदम ऐसा लगता है कि आप किसी दूसरी दुनियां में और किसी दूसरे युग में चले आए है। हर काम इतना व्यवस्थित, नियमबद्ध और सुचारू रूप से होता है कि भारत में कार्य करने के साधन और कार्य करने वालों के रवैए से परिचित व्यक्ति को काफी बड़ा झटका लगता है। चाहे वह हवाई अड्डे से निकासी हो या मार्ग तय करने के लिए किसी वाहन की सवारी, सभी कुछ इतना मशीनी होता है कि उससे ऐसा लग सकता है कि यहां पर आदमी नहीं मशीनें काम करती है।

न्यूयार्क अमेरिका का सबसे बड़ा शहर, सबसे बड़ा औद्योगिक और उत्पादन केन्द्र तो है ही, यह विश्व की वित्तीय और व्यापारिक राजधानी भी है और अब तो यह पश्चिमी जगत की सांस्कृतिक राजधानी होने का दावा भी कर सकता है। इस समय इसकी आबादी 90 लाख है और 17वीं शताब्दी में हालैंड से आए हुए व्यापारियों तथा साधारण लोगों द्वारा बसाए गए दुनियां के इस सबसे प्राकृतिक और उत्कृष्ट बदंरगाह शहर की एक ही सड़क ऐसी है जो दुनियां में उथल-पुथल कर देने के लिए काफी है और वह है 'बाल स्ट्रीट', जहाँ पर शेयर बाजार है। उस पर ही, न केवल अमेरिकी बल्कि दुनियाँ भर की बड़ी-बड़ी कंपनियों के कार्यालय और दलाली करने वाली फर्मे है।

संस्कृत के अद्वितीय विद्वान् विद्वता के पक्षपाती, सौहार्द के कीर्ति स्तम्भ, विद्याव्यसनी, सरस्वती के वरदपुत्र संस्कृत जगत् के जाज्वल्पमान, भारतीय संस्कृति एवं संस्कृति भाषा के संरक्षक, अपने जीवन को आत्मसात् कर देने वाले डॉ. सत्यव्रत शास्त्री को कौन नहीं जानता डॉ. सत्यव्रत शास्त्री ने भारत में ही नहीं अपितु विदेश में भी अपनी संस्कृत के वर्चस्य को प्रसारित किया है शास्त्री जी जब विदेश से भारत आए तब उन्होंने विदेश में जैसे कुछ देखा, सुना उसी रूप में उन्होंने दक्षिणपूर्ण एशिया के कुछ देश जैसे थाईदेश और शर्मण्यदेश पर रोचक काव्य लिखा।

संस्कृत विश्व जगत् में सर्वप्रथम मैक्समूलर ने जर्मनी के लिए संस्कृत शब्द में शर्मण्य का प्रयोग किया था।[6] इसी शब्द को डॉ. सत्यव्रत शास्त्री ने अपनाया 'शर्मण्यदेशः सुतरां विभाति। यह एक यात्रा काव्य

[3] धरित्रीदर्शनलहरी सन्धानम् प्रथम उन्मेष, पृ. 68/8

[4] धरित्रीदर्शनलहरी सन्धानम् चतुर्थ उन्मेष, पृ. 73/4

[5] धरित्रीदर्शनलहरी सन्धानम् तृतीय उन्मेष, पृ. 71/2-8

[6] शर्मण्यदेशः सुतरां विभाति श्लोक-1

है इस काव्य में डॉ. सत्यव्रत शास्त्री ने अपनी जर्मन यात्रा का वर्णन किया है।

जब वे 1975 में यूरोप की यात्रा पर गए थे तब उन्हें जर्मन देश में भी जाने का सुअवसर प्राप्त हुआ।[7]

शास्त्री जी जब जर्मन देश से लौट कर दिल्ली आए तब उन्होंने वहाँ जो कुछ देखा था वो सब यात्रा काव्य के रूप में लिखा। इसके लिखने का प्रयोजन केवल मात्र यात्रा वर्णन ही नहीं था अपितु भारत और जर्मन के बीच विद्यमान मैत्रीभाव तथा सद्भाव पूर्व संम्बन्धों को रेखांकित करना भी था।[8] उन्होंने वहाँ के रहन-सहन, खान-पान, सामाजिक, राजनीतिक प्राकृतिक सौन्दर्य को देखा एवं अनुभव किया, उसका ज्यों का त्यों वर्णन किया।[9] शास्त्री जी जर्मनदेश की पृष्ठभूमि पर पैर 18 जून 1975 को रखे थे।[10] और वहाँ के एक होटल में ठहरे।[11] इसके पश्चात् गांतिगंन वान्[12] हाइडलवर्ग [13] तथा ट्रबिंगन' इत्यादि स्थानों पर गए। ये स्थान इतने भव्य गगनचुम्बी तथा प्राकृतिक सौन्दर्य से ओत-प्रोत थे जिसको देख का शास्त्री जी कर चित्त अत्यधिक प्रफुल्लित हो उठा शतुतगर्त के पास में एक मनोहर तथा मन को अह्लादित कर देने वाला श्याम वन का कान्तार है वे कहते हैं कि इस श्याम बन का मनोहर वर्णन किस पाठक के मन को नहीं मोह लेता ऐसा प्रतीत होता है कि पाठक उसी वन के बीच में बैठा हैं-

झरैश्च सम्यैरनुनादितानि सुखं गवाध्यासितशाद्वलानि।
जलप्रवाहैः परिशोभितानि स्रोतस्विनीभिश्च विभूषितानि।।[14]

साथ-ही-साथ डॉ. सत्यव्रत जी 7 अक्टूबर 1977 से 5 नवम्बर 1979 के दौरान थाईलैण्ड के बैकॉक शहर मे चुलालौङ्कौर्न विश्वविद्यालय में अतिथिप्रवक्ता थे तब उन्होंने थाईदेशविलासम् काव्य की रचना की थी यह काव्य 120 पद्यों में निहित है। इस काव्य की जो कथा वस्तु है वह थाईदेश के इतिहास पर आश्रित है इस काव्य को कवि ने छन्दोबद्ध कविता के द्वारा एक सुन्दर एवं नवीन रूप प्रदान किया है।[15] इस काव्य के प्रारम्भ में शास्त्री जी ने थाईदेश का जो प्रारम्भिक नाम है उसको बताते है फिर वहाँ की जो राजवंशावली है उसका वर्णन करते हैं।

शयमेति नामातिपुराणमस्य ख्यातं पुराणादिषु यद्विहाय
थाईतिजात्यध्युषितत्वहेतोर्यं थाईलैण्डं कथयन्ति लोकाः।[16]

कवि कहता है थाईलैंण्ड ऐसा देश है जिसकी पहचान अपनी प्राकृतिक छटाओं के लिए जाना जाता है विश्व का जो मानचित्र है उसमें थाईलैण्ड मानो प्रकृति की गोद में ही स्थित है।

कवि आगे यह भी बताता है कि इतना ही नहीं वहाँ के स्त्री पुरूष राजा प्रजा छोटे बड़े जितने भी मानव है वह राम और सीता के विषय में भी जानते है। साथ ही भारतीयों में मान्य ब्रह्म इत्यादि देवताओं के भी वहाँ बहुत से मन्दिर आज भी विद्यमान है।[17]

थाईदेश का लक्षण करते हुए डॉ. सत्यव्रतशास्त्री लिखते है कि थाईलैण्ड का जो देश है वह अपने धर्मराष्ट्र राजा तथा संस्कृति पर टिका हुआ है।[18] कवि यह भी कहता है कि इतना होने पर भी वहाँ यत्र-तत्र जो कुछ कलाकृतियाँ है उस पर तथा जो लोकतन्त्र है उस पर एवं अन्य स्थानों पर भी हिन्दू संस्कृति एवं रामायण संस्कृति का प्रभाव स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है।[19]

इधर नवीन कविता के माध्यम से प्रो. हरिदत्त शर्मा ने अपनी कृति उत्कलिका में पेरिस नगर और यूरोप जाकर जो वहाँ के वेषभूषा, भाषाशैली, प्राकृतिक सौन्दर्य, गगनचुम्बी अट्टालिकाएँ, नृत्य वादन संगीत को देखा वैसे ही अपनी कविता के माध्यम से दिग्दर्शन कराया है।

यथा-

अयनं विततं नयनं चकितं
प्राविशं यदा नवसंसारम्।
दृश्यं भव्यं सकलं नव्यम्
आगतो यदा सागरपारम्।।
भाषा भूषा वेविध्यमयी
इह चित्रविचित्रं परिधानम्।
नवदेशो वेषः परिवेशः
सर्वं हि समुज्ज्वलमागारम्
अयनं विततं.....[20]

अन्ततः समग्र अर्वाचीन संस्कृत-साहित्य के प्रमुख बिन्दुओं के अवलोकनोपरान्त से एक तथ्य स्पष्ट रूप से प्रकाश में आ रहा है कि हमारे कवियों ने बदलते जीवन मूल्यों पर अपनी दृष्टि केन्द्रित की है और उसी के आधार पर अपने काव्य की दिशा का भी निर्धारण किया है। आज वह उन्हीं पुरावृतान्त, राजसी वर्णन, प्रकृति चित्रण और यशप्रशस्ति में उलझा हुआ नहीं है अपितु समाज के साथ चलने की, समय की प्रवाह में बहने की और नये मूल्यों को संजोने की अभिलाषा और शक्ति दोनों ही हैं। कवि और पाठक दोनों का काव्य-रसास्वाद बदल रहा है। आज वही प्रसिद्धि और प्रशंसा पाता है जो समय के साथ उत्तरोत्तर सामंजस्य स्थापित करने में समर्थ है। अतः

7 वही श्लोक-3
8 वही श्लोक-3, 69-97
9 वही श्लोक-3, 11
10 वही श्लोक-3, 12
11 वही श्लोक-3, 13
12 वही श्लोक-3, 27-41
13 वही श्लोक-3, 54-55
14 वही पृ. 10
15 था. दे. वि. श्लोक. 1
16 वही, श्लोक 2
17 वही श्लोक 12
18 वही 61
19 वही 113
20 उत्कलिका, योरोपीयम् पृ. 49

कवि ने इस दिशा को समझ लिया है और वह उसी का अनुशीलन करता हुआ कालजयी रचना लिखने को प्रयासरत है। कवि की चेतना प्रत्येक घटना पर केन्द्रित रहती है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. ऋग्वेद- चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी
2. रामायण- चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी
3. धरित्रीदर्शनलहरी-डॉ. हरि सिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर
4. शर्मण्यदेशः सुतरां विभाति इस्टर्न बुक्स लिंकर्स, दिल्ली
5. थाईदेशविलासम्, इस्टर्न बुक्स लिकर्स, दिल्ली
6. उत्कलिका, राका प्रकाशन, इलाहाबाद